श्रीमद् आचार्य नेमिचन्द्र
सिद्धान्तचक्रवर्ति विरचित

# लब्धिसार

## प्रथमोपशम सम्यक्त्व अधिकार

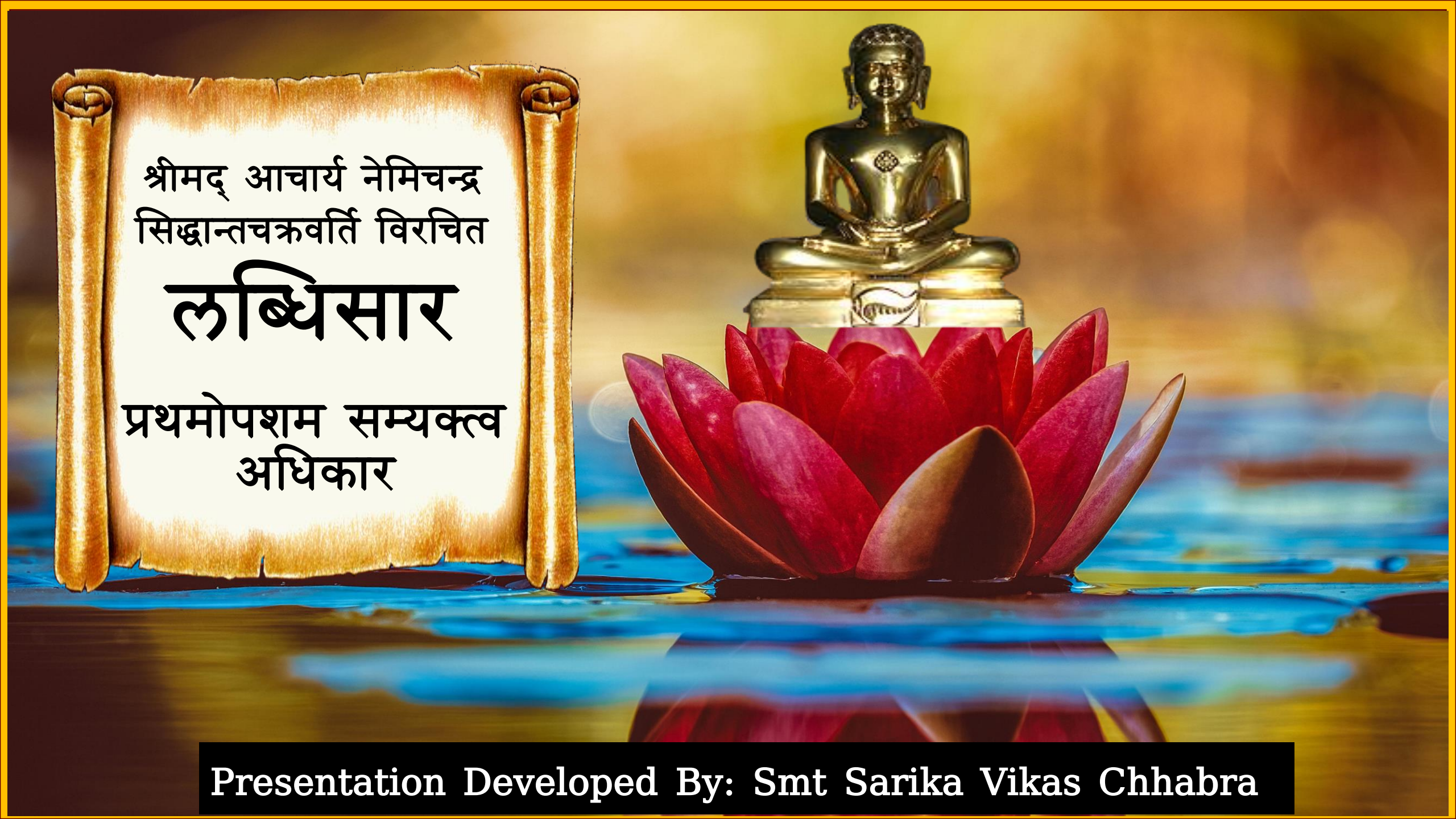

Presentation Developed By: Smt Sarika Vikas Chhabra

# मंगलाचरण

सिद्धे जिणिंदचंदे, आयरिय-उवज्झाय-साहुगणे ।
वंदिय सम्मद्दंसण-चरित्तलद्धिं परूवेमो ॥1॥

# अंतोकोडाकोडीठिदिं, असत्थाण सत्थगाणं च ।
# विचउट्ठाणरसं च य, बंधाणं बंधणं कुणई ॥24॥

- अन्वयार्थ:- सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि (बंधाणं) बध्यमान प्रकृतियों का (अंतोकोडाकोडीठिदिं) अंत:कोटाकोटी सागरोपमप्रमाण स्थितिबंध (च य) और (असत्थाण सत्थगाणं च विचउट्ठाणरसं बंधणं) अप्रशस्त प्रकृतियों का द्विस्थानीय अनुभागबंध और प्रशस्त प्रकृतियों का चतु:स्थानीय अनुभागबंध (कुणइ) करता है ।

www.JainKosh.org

# बध्यमान प्रकृतियों का स्थितिबन्ध आदि

| बंध प्रकार | प्रमाण |
|---|---|
| स्थितिबन्ध | अंत:कोटाकोटी सागरोपमप्रमाण |
| अनुभाग बंध - अप्रशस्त प्रकृतियों का | द्विस्थानगत अनुभाग अनन्तगुणी हानि से |
| अनुभाग बंध - प्रशस्त प्रकृतियों का | चतु:स्थानगत अनुभाग प्रतिसमय अनन्तगुणी वृद्धिसे |

www.JainKosh.org

# घाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

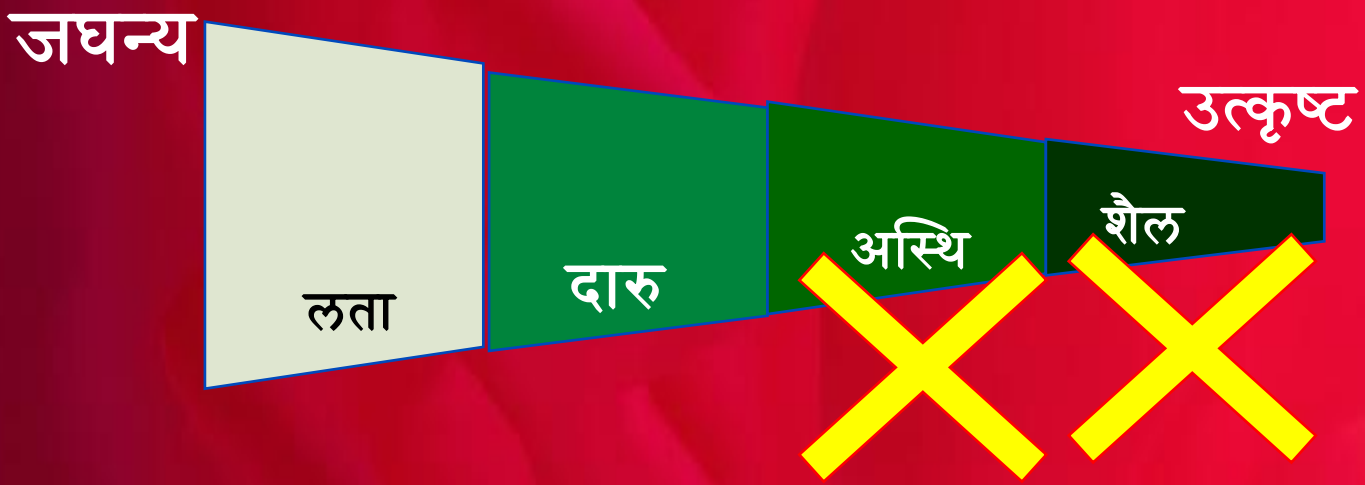


नए बंधने वाले घाति कर्मों में इन दो स्थान का अनुभाग नहीं बंधता

**लता**

- बेल

**दारु**

- काष्ठ, लकड़ी

**अस्थि**

- हड्डी

**शैल**

- पाषाण, पर्वत

# अघातिया कर्मों का अनुभाग

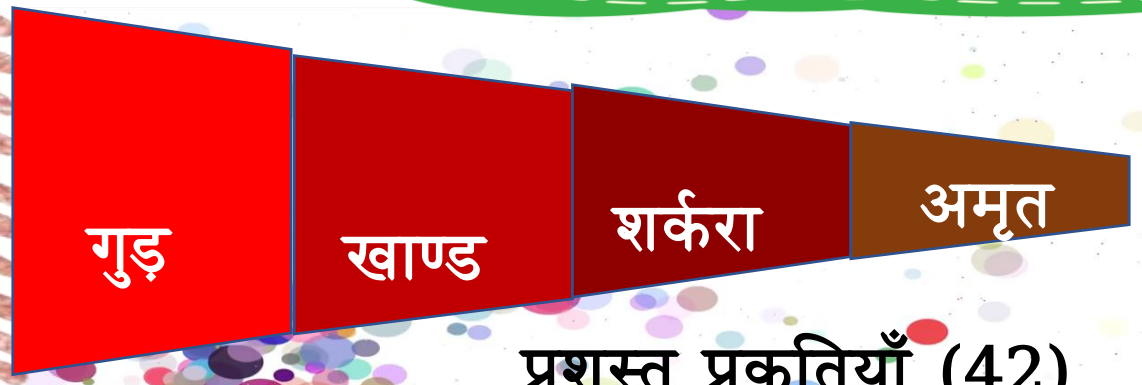


प्रशस्त प्रकृतियाँ (42)

जैसे गुड़, खाण्ड आदि अधिक-अधिक मिष्ट हैं, वैसे इन प्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर मिष्टरूप हैं । अर्थात् अधिक-अधिक सांसारिक सुख के कारण हैं ।

अप्रशस्त प्रकृतियाँ (37)

जैसे निंब, कांजीर आदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:खद हैं, वैसे इन अप्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:ख के कारण हैं ।

मिच्छणथीणति सुरचउ, समवज्जपसत्थगमणसुभगतियं ।
णीचुक्कस्सपदेसमणुक्कस्सं वा पबंधदि हु ॥25॥

- अन्वयार्थः- (मिच्छणथीणति) मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धिचतुष्क, स्त्यानगृद्धित्रिक (सुरचउ) देवचतुष्क (समवज्जपसत्थगमण-सुभगतिय) समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभगत्रिक, (णीचुक्कस्सपदेसं) और नीचगोत्र का उत्कृष्ट प्रदेशबंध (वा) अथवा (अणुक्कस्सं) अनुत्कृष्ट (पबंधदि हु) प्रदेशबन्ध करता है ।

www.JainKosh.org

# प्रायोग्य लब्धि में प्रदेश बंध

इन 19 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अथवा अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध होता है।

मिथ्यात्व,

अनन्तानुबन्धी 4,

स्त्यानगृद्धि-3,

देवचतुष्क,

समचतुरस्र संस्थान,

वज्रर्षभनाराच संहनन,

प्रशस्त विहायोगति,

सुभगत्रय

नीच गोत्र

www.JainKosh.org

# एदेहिं विहीणाणं, तिण्णि महादंडएसु उत्ताणं । एक्कट्ठिपमाणाणमणुक्कस्सपदेसबंधणं कुणइ ॥26॥

- अन्वयार्थः- (एदेहिं विहीणाणं) पूर्वोक्त (19) प्रकृतियों से रहित (तिण्णि महादंडएसु उत्ताणं) तीन महादंडक में (गाथा क्र. 21, 22, 23) कही गयी (एक्कट्ठिपमाणाणं) 61 प्रकृतियों का (अणुक्कस्सपदेसबंधणं) अनुत्कृष्ट प्रदेशबन्ध (कुणइ) करता है ।

www.JainKosh.org

# तीन महादंडक

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख मिथ्यादृष्टि जीव जितनी प्रकृतियों को बांधता है उसका कथन तीन महादंडक के द्वारा किया गया है।

## प्रथम महादण्डक

- मनुष्य और तिर्यंचों में बंधयोग्य प्रकृतियों का कथन है।

## द्वितीय महादण्डक

- देव और प्रथम छह पृथ्वियों के नारकियों की बंधयोग्य प्रकृतियों का कथन है।

## तृतीय महादण्डक

- सातवीं पृथ्वी के नारकियों की बंधयोग्य प्रकृतियों का वर्णन है।

www.JainKosh.org

# प्रायोग्य लब्धि में प्रदेश बंध

3 महादंडकों में कही गयी 80 में से शेष 61 प्रकृतियों का अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध करता है ।

## 19 प्रकृतियाँ

उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध

## 61 प्रकृतियाँ

अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध

www.JainKosh.org

पढमे सव्वे विदिये, पण तदिये चउ कमा अपुणरुत्ता ।
इदि पयडीणमसीदी, तिदंडएसु वि अपुणरुत्ता ॥27॥

- अन्वयार्थ:- (पढमे सव्वे) प्रथम महादण्डक की सभी प्रकृतियाँ (विदिये पण) दूसरे महादण्डक में पाँच प्रकृतियाँ, (तदिये चउ) तीसरे महादण्डक में चार प्रकृतियाँ (कमा अपुणरुत्ता) क्रम से अपुनरुक्त हैं। (इदि) इस प्रकार (तिदंडएसु वि) उन तीन दण्डक में मिलकर (पयडीणमसीदी) 80 प्रकृतियाँ (अपुणरुत्ता) अपुनरुक्त हैं ।

www.JainKosh.org

प्रथम दण्डक में सभी तीन घातियादि इकहत्तर (71) प्रकृतियाँ अपुनरुक्त कही गयी हैं।

दूसरे महादण्डक में मनुष्यचतुष्क और वज्रर्षभनाराच संहनन इसप्रकार पाँच प्रकृतियाँ अपुनरुक्त कही गयी हैं।

तीसरे महादण्डक में तिर्यंचद्विक, नीचगोत्र और उद्योत ऐसी चार प्रकृतियाँ अपुनरुक्त कही गयी हैं।

तीन महादण्डक की मिलकर (71+5+4) कुल अपुनरुक्त प्रकृतियाँ 80 होती हैं ।

www.jainkosh.org

उदये चोद्दसघादी, णिद्दापयलाणमेक्कदरगं तु ।
मोहे दसतिय णामे, वचिठाणं सेसगे सजोगेक्कं ॥28॥

- अन्वयार्थ:- प्रथमोपशम सम्यक्त्व के सम्मुख विशुद्ध मिथ्यादृष्टि के (उदये) उदय में (चोइद्दस घादी) तीन घातिया कर्मों की 14 प्रकृतियाँ (णिद्दापयलाणमेक्कदरंग तु) निद्रा और प्रचला में से कोई एक (मोहे दसतिय) मोहनीय की दशत्रिक अर्थात् 10-9-8 प्रकृतियाँ (णामे वचिठाणं) नामकर्म की भाषा-पर्याप्तिकाल में उदय योग्य होने वाली 29-30-31 प्रकृतियाँ (सेसगे सजोगेक्कं) शेष कर्मों की (आयु, गोत्र व वेदनीय की) स्वयोग्य एक-एक प्रकृति है ।

www.JainKosh.org

# स्थान

एक समय में एक जीव को संख्या भेदों की अपेक्षा से जो प्रकृतियों का समूह प्राप्त होता है उसे स्थान कहते हैं।

# भंग

समान संख्या वाले स्थानों में जो प्रकृतियों का परिवर्तन होता है, उसे भंग कहते हैं।

जैसे - एक नारकी जीव को 55 प्रकृतियों का उदय होने से 55 प्रकृतियों का एक स्थान हुआ।
वे 55 प्रकृतियाँ कषाय, हास्य-युगल और वेदनीय का बदल करके अलग-अलग 16 प्रकार से संभव होने से 16 भंग हुए।

# नारकी को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

ज्ञानावरण-5

चक्षुदर्शनावरणादि-4

अन्तराय-5

मोहनीय की 10, 9 या 8

एक नरकायु

भाषा-पर्याप्तिकाल में उदय होने योग्य नामकर्म की 29 प्रकृतियाँ

वेदनीय की दो में से कोई एक और

नीच गोत्र

www.JainKosh.o

# नारकी को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

इस प्रकार किसी जीव को मोहनीय की आठ प्रकृतिस्थान से युक्त 54 प्रकृतियों का उदय होता है।

मोहनीय की चार कषाय और हास्य-शोक युगल को बदलने से 8 भंग होते हैं ।

उसको वेदनीय के 2 भंगों से गुणा करने पर 16 भंग होते हैं।

नरकगति में स्थिर युगल और शुभ युगल को छोडकर शेष नामकर्म की अप्रशस्त प्रकृतियों का ही उदय होने से नामकर्म के भंगों का अभाव है।

# नारकी को उदय-योग्य प्रकृतियाँ

- किसी जीव को वे ही 54 प्रकृतियाँ भय अथवा जुगुप्सासहित 9 प्रकृति-स्थान से युक्त होकर 55 प्रकृतियों का उदय होता है । उसके भंग पूर्व में कहे गए सोलह (16) भंगों को भय-जुगुप्सा से गुणित करने पर 32 होते हैं ।
- पुनः किसी जीव को वही प्रकृतियाँ भय, जुगुप्सा दोनों से सहित दस प्रकृति स्थान से युक्त होकर 56 छप्पन प्रकृतियाँ उदयरूप होती हैं । उसके भंग पूर्व के समान सोलह (16) जानना चाहिए ।

| उदयस्थान | 54 प्रकृतिक | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक |
|---|---|---|---|
| भंग | 16 | 32 | 16 |

www.JainKosh.org

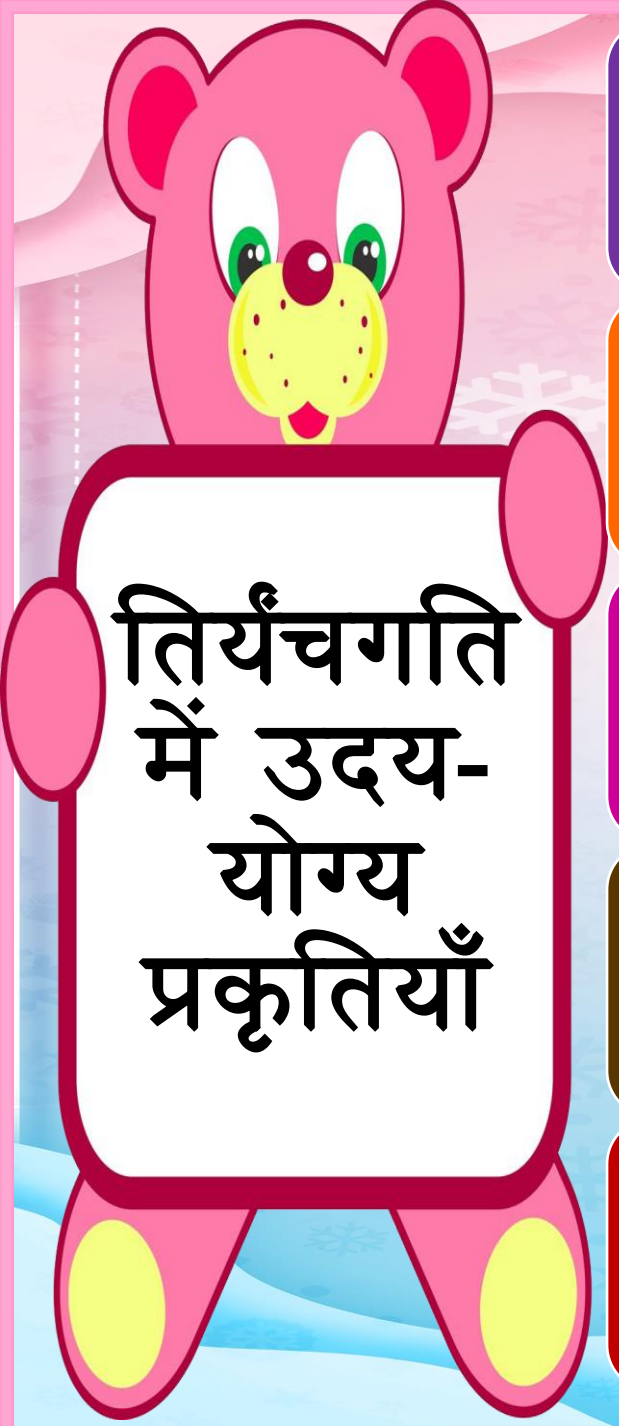

# तिर्यंचगति में उदय-योग्य प्रकृतियाँ

तिर्यंचगति में पूर्वोक्त मोह की आठ प्रकृति-स्थान से युक्त 54 प्रकृतियों में संहनन मिलाने पर (पचपन) 55 प्रकृतियाँ उदयरूप होती हैं ।

मोहनीय के 24 भंग होते हैं ।

वेदनीय की दो में से एक प्रकृति का उदय होने से 2 भंग होते हैं।

नामकर्म के 1152 भंग होते हैं ।

सब भंगों का गुणा करने पर कुल 24 x 2 x 1152 = 55,296 भंग होते हैं ।

www.jainkosh.org

# तिर्यंचगति में उदय-योग्य प्रकृतियाँ

पूर्वोक्त 55 प्रकृतियाँ भय अथवा जुगुप्सा से सहित मोहनीय के नौ प्रकृतिक स्थान से युक्त उदयरूप होने पर 56 होती हैं। पूर्व में कहे गए 55,296 भंग भय और जुगुप्सा के दोनों भंगों से गुणा करने पर 1,10,592 होते हैं।

पुनः वे पूर्वोक्त 55 प्रकृतियाँ युगपत् भय-जुगुप्सारूप मोहनीय के दस स्थान से युक्त होकर 57 होती हैं। भय-जुगुप्सा का एक काल में उदय होने से उसके 2 भंग नहीं होते हैं। इसलिए पूर्वोक्त 55,296 भंग होते हैं।

www.JainKosh.org

# तिर्यंचगति में उदय-योग्य प्रकृतियाँ

पुनः ये ही पूर्वोक्त 55, 56 और 57 ये तीन स्थान उद्योत सहित होने पर 56, 57 और 58 प्रकृतिरूप होते हैं।

उनके भंग पूर्व के समान जानना चाहिए।

| उदयस्थान | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक |
|---|---|---|---|
| भंग | 55296 | 110592 | 55296 |

| उद्योत सहित उदयस्थान | | | |
|---|---|---|---|
| उदयस्थान | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक | 58 प्रकृतिक |
| भंग | 55296 | 110592 | 55296 |

www.JainKosh.org

# मनुष्यगति में उदय योग्य प्रकृतियाँ

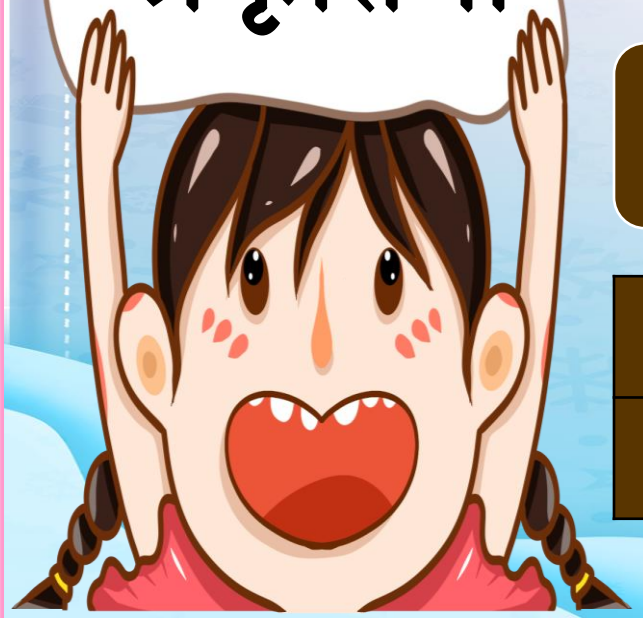

## मनुष्यगति में भी तिर्यंचगति के समान जानना चाहिए। परन्तु

- यहाँ उद्योत नामकर्म से युक्त तीन स्थान नहीं होते हैं क्योंकि उद्योत का उदय तिर्यंचगति में होता है, ऐसा नियम है।
- मनुष्यगति में उच्चगोत्र का भी उदय होने से यहाँ गोत्र के 2 भंग होते हैं।

## अतः इनके भंग इस प्रकार हैं -

| उदयस्थान | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक |
|---|---|---|---|
| भंग | 1,10,592 | 2,21,184 | 1,10,592 |

# देवगति में उदय योग्य प्रकृतियाँ

देवगति में भी नरकगति के समान जानना चाहिए। परन्तु यहाँ

- नामकर्म की प्रशस्त प्रकृतियों का एवं उच्चगोत्र का ही उदय होता है।
- मोहनीय की प्रकृतियों में से नपुंसक वेद को निकालकर स्त्रीवेद और पुरुषवेद मिलाने पर दुगुणे भंग होते हैं।

अतः इनके भंग इस प्रकार हैं -

| उदयस्थान | 54 प्रकृतिक | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक |
|---|---|---|---|
| भंग | 32 | 64 | 32 |

www.JainKosh.org

# निद्रा, प्रचला सहित उदयस्थान

पूर्वोक्त सारे उदयस्थान और भंग; निद्रा और प्रचला के उदय से रहित जीव की अपेक्षा से कहे गए हैं।

चारों गति में उदयरूप कहे गए प्रकृतियों में निद्रा अथवा प्रचला मिलाने पर एक-एक प्रकृति अधिक होती है और निद्रा अथवा प्रचला में से एक का उदय होने से 2 भंग होते हैं। उन 2 भंगों को पूर्वोक्त भंगों से गुणा करने पर दुगुणे भंग होते हैं।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| नरक गति | उदयस्थान | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक |
| | भंग | 32 | 64 | 32 |
| तिर्यंच गति | उदयस्थान | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक | 58 प्रकृतिक |
| | भंग | 110592 | 2,21,184 | 110592 |
| तिर्यंच गति (उद्योत सहित) | उदयस्थान | 57 प्रकृतिक | 58 प्रकृतिक | 59 प्रकृतिक |
| | भंग | 110592 | 2,21,184 | 110592 |
| मनुष्य गति | उदयस्थान | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक | 58 प्रकृतिक |
| | भंग | 2,21,184 | 442368 | 2,21,184 |
| देव गति | उदयस्थान | 55 प्रकृतिक | 56 प्रकृतिक | 57 प्रकृतिक |
| | भंग | 64 | 128 | 64 |

# उदयिल्लाणं उदये, पत्तेक्कठिदिस्स वेदगो होदि ।
# विचउट्ठाणमसत्थे, सत्थे उदयिल्लरसभुत्ती ॥29॥

- अन्वयार्थ :- (उदइल्लाणं) उदय वाली प्रकृतियों का (उदये पत्ते) उदय प्राप्त होने पर (एक्कठिदिस्स) एक स्थिति का (वेदगो) भोक्ता (होदि) होता है ।
- (असत्थे सत्थे विचउट्ठाणं) अप्रशस्त प्रकृतियों के द्विस्थानरूप और प्रशस्त प्रकृतियों के चतुःस्थानरूप (उदयिल्लरसभुत्ती) उदय वाले अनुभाग को भोगता है ।

www.JainKosh.org

# उदय प्रकृतियों का स्थिति और अनुभाग

एक निषेकरूप एक स्थिति का भोक्ता

अप्रशस्त प्रकृतियों के द्विस्थानगत अनुभाग का भोक्ता

प्रशस्त प्रकृतियों के चतुःस्थानगत अनुभाग का भोक्ता

www.JainKosh.org

# अजहण्णमणुक्कस्सं, पदेसमणुभवदि सोदयाणं तु ।
# उदयिल्लाणं पयडि-चउक्काणमुदीरगो होदि ॥30॥

- अन्वयार्थः- वह विशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीव (सोदयाणं तु) उदयसहित प्रकृतियों के (अजहण्णमणुक्कस्सं पदेस) अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेश का (अणुभवदि) अनुभव करता है ।
- (उदयिल्लाणं) उदयस्वरूप प्रकृतियों का (पयडिचउक्काणं) प्रकृति चतुष्क अर्थात् प्रकृति, प्रदेश, स्थिति और अनुभाग का (उदीरगो) उदीरक (उदीरणा करने वाला) (होदि) होता है ।

www.JainKosh.org

वह जीव उदयसहित प्रकृतियों का अजघन्य-अनुत्कृष्ट प्रदेश का अनुभव करता है ।

- अजघन्य-अनुत्कृष्ट याने जघन्य और उत्कृष्ट को छोड़कर शेष मध्य के भेद

उदय और उदीरणा के स्वामी-भेद का अभाव है अर्थात् जिनको जिन प्रकृतियों का उदय होता है उनको उन्हीं प्रकृतियों की उदीरणा होती है ।

www.jainkosh.org

# दुति आउ तित्थहारचउक्कूणा सम्मगेण हीणा वा । मिस्सेणूणा वा वि य, सव्वे पयडी हवे सत्तं ॥31॥

- अन्वयार्थः- (दुति आउ) दो अथवा तीन आयु (तित्थहारचउक्कूणा) तीर्थंकर और आहारकचतुष्क इन प्रकृतियों से रहित (सम्मगेण हीणा) सम्यक्त्वप्रकृति से रहित (वा) अथवा (मिस्सेणूणा वि य) मिश्रप्रकृति से भी रहित (सव्वे पयडी) सर्व प्रकृतियों का (सत्तं) सत्त्व (हवे) होता है ।

www.JainKosh.org

# प्रथमोपशम के अभिमुख मिथ्यादृष्टि के सत्त्व प्रकृतियाँ:
## अनादि मिथ्यादृष्टि

| जीव | | सत्त्व | असत्त्वरूप प्रकृतियों के नाम |
|---|---|---|---|
| १ | अबद्धायुष्क | १३८ | ३ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारक-चतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र, १ सम्यग्मिथ्यात्व |
| २ | बद्धायुष्क | १३९ | २ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारक-चतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र, १ सम्यग्मिथ्यात्व |

www.JainKosh.org

# सादि मिथ्यादृष्टि

| | जीव | सत्त्व | असत्त्वरूप प्रकृतियों के नाम |
|---|---|---|---|
| १ | उद्वेलनारहित अबद्धायुष्क | १४० | ३ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क |
| २ | सम्यक्त्व-उद्वेलित अबद्धायुष्क | १३९ | ३ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र |
| ३ | सम्यग्मिथ्यात्व-उद्वेलित अबद्धायुष्क | १३८ | ३ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र, १ सम्यग्मिथ्यात्व |
| ४ | उद्वेलनारहित बद्धायुष्क | १४१ | २ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क |
| ५ | सम्यक्त्व-उद्वेलित बद्धायुष्क | १४० | २ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र |
| ६ | सम्यग्मिथ्यात्व-उद्वेलित बद्धायुष्क | १३९ | २ आयु, १ तीर्थंकर, ४ आहारकचतुष्क, १ सम्यक्त्व प्र, १ सम्यग्मिथ्यात्व |

# शंका :- उद्वेलन संक्रमण का अर्थ क्या होता है ?

समाधान :- अध:प्रवृत्तादि तीन करण के बिना ही उद्वेलन-प्रकृतियों के परमाणुओं में उद्वेलन भागहार का भाग देने पर एक भागमात्र परमाणु जहाँ अन्य प्रकृतिरूप से परिणमन करते हैं उसे उद्वेलन-संक्रमण कहते हैं।

www.JainKosh.org

# अजहण्णमणुक्कस्सं, ठिदित्तियं होदि सत्तपयडीणं ।
# एवं पयडिचउक्कं, बंधादिसु होदि पत्तेयं ॥32॥

- अन्वयार्थः- (सत्तपयडीणं) सत्त्व प्रकृतियों का (ठिदित्तियं) स्थितित्रिक अर्थात् स्थिति, अनुभाग व प्रदेश (अजहण्णमणुक्कस्सं) अजघन्य-अनुत्कृष्ट होता है ।
- (एवं) इस प्रकार (बंधादिसु) बन्धादि में (बंध, उदय, उदीरणा और सत्त्व में) (पत्तेयं) प्रत्येक का (पयडिचउक्कं) प्रकृति चतुष्क (प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश) (होदि) होता है ।

www.JainKosh.org

# प्रायोग्यता लब्धि में सत्त्व

सत्कर्म प्रकृतियों का स्थिति-सत्त्व,

अनुभाग-सत्त्व और

प्रदेश-सत्त्व

= अजघन्य-अनुत्कृष्ट

www.JainKosh.org

तत्तो अभव्वजोग्गं, परिणामं बोलिऊण भव्वो हु ।
करणं करेदि कमसो, अधापवत्तं अपुव्वमणियट्टि ॥33॥

- अन्वयार्थः- (तत्तो) उसके बाद अर्थात् प्रायोग्य-लब्धि के बाद (अभव्वजोग्गं परिणामं) अभव्य के योग्य परिणामों को (बोलिऊण) लांघकर (भव्वो हु) भव्य जीव (कमसो) क्रमशः (अधापवत्तं अपुव्वमणियट्टिकरणं) अधःप्रवृत्त, अपूर्व और अनिवृत्तिकरण (करेदि) करता है ॥33॥

www.JainKosh.org

www.JainKosh.org

# करण किसे कहते हैं?

जिन परिणाम विशेषों के द्वारा

दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के

उपशमादिरूप विवक्षित भाव उत्पन्न किए जाते हैं

उन परिणामों को करण कहते हैं।

www.JainKosh.org

# अंतोमुहुत्तकाला, तिण्णि वि करणा हवंति पत्तेयं ।
# उवरीदो गुणियकमा, कमेण संखेज्जरूवेण ॥34॥

- अन्वयार्थः- (तिण्णि वि करणा) तीनों ही करण (पत्तेयं) प्रत्येक (अंतोमुहुत्तकाला) अंतर्मुहूर्तकाल प्रमाण (हवंति) होते हैं। (उवरिदो) ऊपर से (कमेण) क्रम से (संखेज्जरूवेण) संख्यातरूप से (गुणियकमा) गुणित क्रम है ।

www.JainKosh.org

# प्रत्येक करण का काल

| करण | काल | संदृष्टि | उदाहरण |
|---|---|---|---|
| अध:प्रवृत्तकरण | अंतर्मुहूर्त | संख्यात आवली × संख्यात × संख्यात | 16 |
| अपूर्वकरण | अंतर्मुहूर्त | संख्यात आवली × संख्यात | 8 |
| अनिवृत्तिकरण | अंतर्मुहूर्त | संख्यात आवली | 4 |
| सबका मिलकरके काल | अंतर्मुहूर्त | | |

www.JainKosh.org

जम्हा हेट्ठिमभावा, उवरिमभावेहिं सरिसगा होंति ।
तम्हा पढमं करणं, अधापवत्तो त्ति णिद्दिट्ठं ॥35॥

- अन्वयार्थः- (जम्हा) जिस कारण से (हेट्ठिमभावा) नीचले समयवर्ती जीवों के परिणाम (उवरिमभावेहि) उपरिम समयवर्ती जीवों के परिणामों के (सरिसगा) सदृश (होंति) होते हैं । (तम्हा) उस कारण से (पढमं करणं) प्रथम करण को (अधापत्तो ति) अधःप्रवृत्त इस प्रकार (णिद्दिट्ठं) कहते हैं ।

www.JainKosh.org

समए समए भिण्णा, भावा तम्हा अपुव्वकरणो हु ।
अणियट्टी वि तहं चि य, पडिसमयं एक्कपरिणामो ॥36॥

- अन्वयार्थ:- जिस कारण (समए समए) प्रत्येक समय में (भिण्णा भावा) भिन्न-भिन्न परिणाम होते हैं (तम्हा) उस कारण (अपुव्वकरणो हु) वह अपूर्वकरण है ।
- (तहं चिय) उसी प्रकार (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (एक्क परिणामे) एक परिणाम होता है इसलिए (अणियट्टि) वह अनिवृत्तिकरण है ॥36॥

www.JainKosh.org

# तीन करण

| | |
|---|---|
| अधःप्रवृत्तकरण | • जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम समान भी हो सकते हैं और भिन्न भी हो सकते हैं । |
| अपूर्वकरण | • जहाँ भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न ही होते हैं । |
| अनिवृत्तिकरण | • जहाँ समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान ही होते हैं । |

www.JainKosh.org

गुणसेढी गुणसंकम, ठिदिरसखंडं च णत्थि पढमम्हि ।
पडिसमयमणंतगुणं, विसोहिवड्ढीहिं वड्ढदि हु ॥37॥

- अन्वयार्थः- (पढमम्हि) प्रथम अधःप्रवृत्त करण में (गुणसेढी) गुणश्रेणी (गुणसंकम) गुणसंक्रमण (च) और (ठिदिरसखंडं च) स्थितिकाण्डकघात, अनुभागकाण्डकघात (णत्थि) नहीं होते हैं । पुनः (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अणंतगुणं) अनन्तगुणी (विसोहिवड्ढीहि) विशुद्धि की वृद्धि से (वड्ढदि हु) बढ़ते हैं ।

www.JainKosh.org

# अध:प्रवृत्तकरण में नहीं होने वाले कार्य

- गुणश्रेणी
- गुणसंक्रमण
- स्थिति कांडक घात
- अनुभाग कांडक घात

www.JainKosh.org

# शंका :- अध:प्रवृत्तकरण में स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात क्यों नहीं होते हैं?

समाधान :- अध:प्रवृत्तकरण में प्रत्येक समय में अनन्तगुणी विशुद्धि से अत्यन्त विशुद्ध होने पर भी स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात के योग्य विशुद्धि को प्राप्त नहीं होता है।

इसलिए अध:प्रवृत्तकरण में स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात नहीं होते हैं।

www.JainKosh.org

# अधःप्रवृत्तकरण के 4 आवश्यक

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ना

स्थितिबंधापसरण

पाप प्रकृतियों का अनुभाग-बंधापसरण

पुण्य प्रकृतियों का बढ़ता हुआ अनुभाग बंध

जीव में होने वाला एकमात्र आवश्यक

प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि

www.JainKosh.org

सत्थाणमसत्थाणं, चउविट्ठाणं रसं च बंधदि हु ।
पडिसमयमणंतेण य, गुणभजियकमं तु रसबंधे ॥38॥

- अन्वयार्थः- (सत्थाणमसत्थाणं चउविट्ठाणं रसं च बंधदि हु) प्रशस्त प्रकृतियों का चतुःस्थानीय और अप्रशस्त प्रकृतियों का द्विस्थानीय अनुभाग बांधता है (च) और (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अणंतेण गुणभजियकमं तु) प्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तगुणित क्रम से और अप्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तवाँ भाग क्रम से (रसबंधे) अनुभाग-बंध होता है ॥38॥

www.JainKosh.org

# अनुभागबंधापसरण

बंधने वाले पाप कर्मों का अनुभाग

प्रतिसमय

अनंतगुणा हीन - अनंतगुणा हीन होकर बंधता है ।

यहाँ पाप प्रकृतियों का मात्र द्विस्थानीय बंध होता है ।

www.JainKosh.org

# घाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

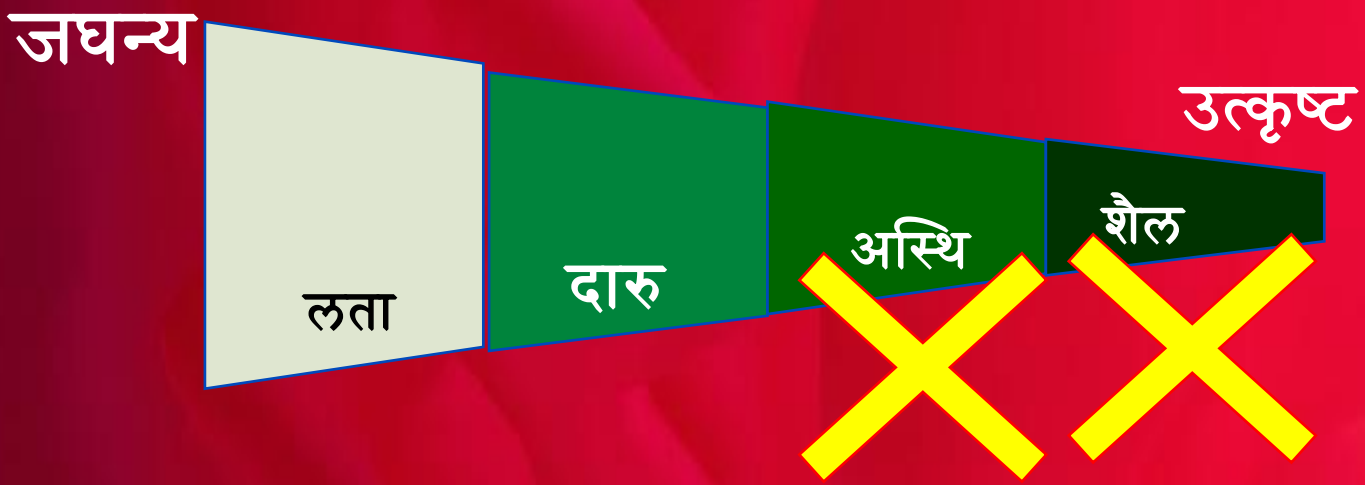









**लता**
- बेल

**दारु**
- काष्ठ, लकड़ी

**अस्थि**
- हड्डी

**शैल**
- पाषाण, पर्वत

नए बंधने वाले घाति कर्मों में इन दो स्थान का अनुभाग नहीं बंधता

# अघातिया कर्मों का अनुभाग

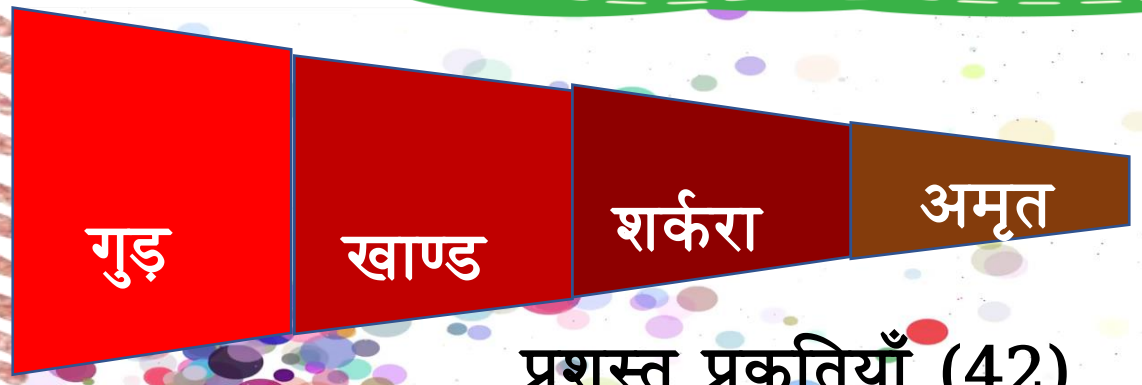


प्रशस्त प्रकृतियाँ (42)

जैसे गुड़, खाण्ड आदि अधिक-अधिक मिष्ट हैं, वैसे इन प्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर मिष्टरूप हैं । अर्थात् अधिक-अधिक सांसारिक सुख के कारण हैं ।

अप्रशस्त प्रकृतियाँ (37)

जैसे निंब, कांजीर आदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:खद हैं, वैसे इन अप्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:ख के कारण हैं ।

# अप्रशस्त अघाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

नए बंधने वाले अघाति कर्मों में इन दो स्थान का अनुभाग नहीं बंधता

www.JainKosh.org

घाति कर्म → लता | दारु

अघाति कर्म → निम्ब | कांजीर

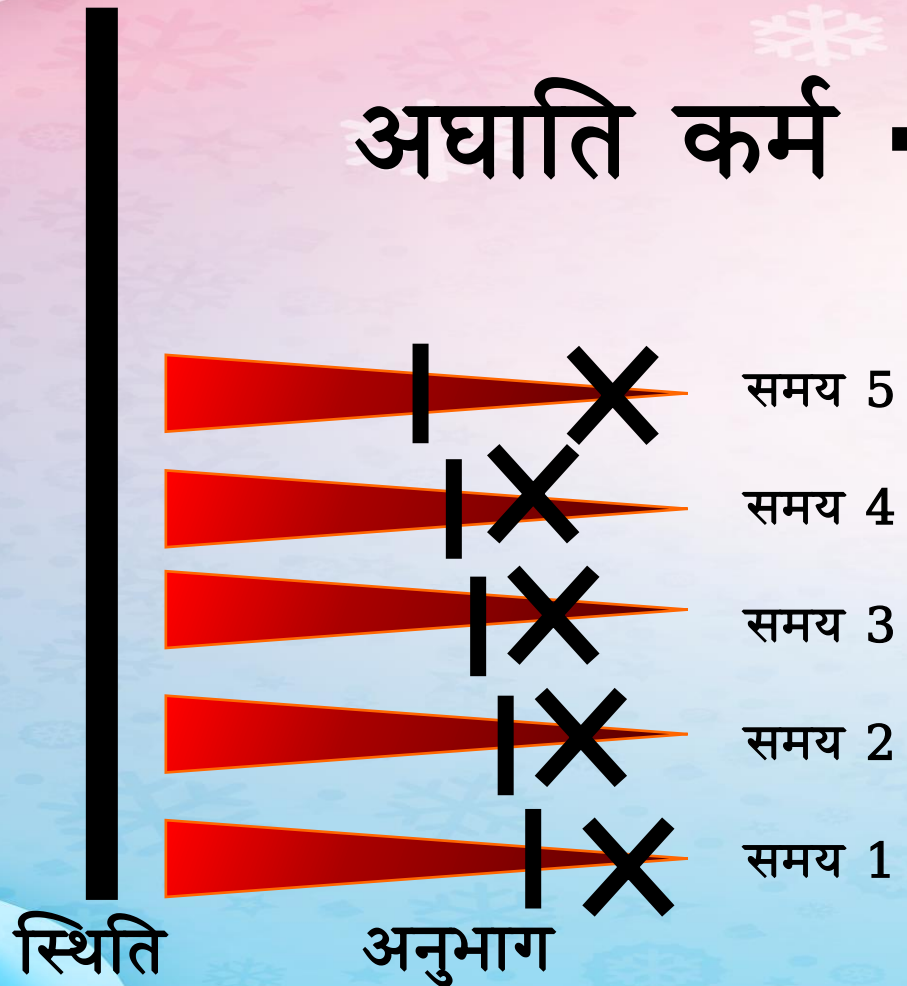




इन दो अनुभाग में भी प्रतिसमय अनंत गुणा हीन-हीन होकर अनुभाग बांधता है

# अनुभाग बंध बढ़ना

बंधने वाले पुण्य कर्मों का अनुभाग

प्रतिसमय अनंतगुणा अधिक - अनंतगुणा अधिक बंधता है।

प्रशस्त कर्मों का चतुःस्थानीय बंध होता है।

# प्रशस्त अघाति कर्मों का चतु:स्थान अनुभाग बंध

| गुड़ | खांड | शर्करा | अमृत |
|---|---|---|---|

नए बंधने वाले अघाति कर्मों में पुण्य प्रकृतियों का चतु:स्थानीय अनुभाग बंध होता है ।

पल्लस्स संखभागं, मुहुत्तअंतेण ओसरदि बंधे ।
संखेज्जसहस्साणि य, अधापवत्तम्मि ओसरणा ॥39॥

- अन्वयार्थ :- (बंधे) स्थितिबंध में (मुहुत्तअंतेण) एक-एक अंतर्मुहूर्त के द्वारा (पल्लस्स संखभागं) पल्य का संख्यातवाँ भाग (ओसरदि) कम करता है । इस प्रकार (अधापवत्तम्मि) अध:प्रवृत्तकरण में (संखेज्जसहस्साणि) संख्यात हजार (ओसरणा) स्थितिबंधापसरण होते हैं ।

www.JainKosh.org

# स्थितिबंधापसरण

बंधने वाले समस्त कर्मों की स्थिति

हर अंतर्मुहूर्त में

घट-घट कर बंधती है

उसे स्थितिबंधापसरण कहते हैं।

www.JainKosh.org

# स्थितिबंधापसरण

वास्तविक गणित में यहाँ होने वाला स्थितिबंध अंत:कोड़ाकोडी सागर है ।

हर अंतर्मुहूर्त में घटने वाला बंध $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ है।

ऐसे स्थितिबंधापसरण अध:प्रवृत्तकरण में हजारों होते हैं ।

www.jainkosh.org

# उदाहरण

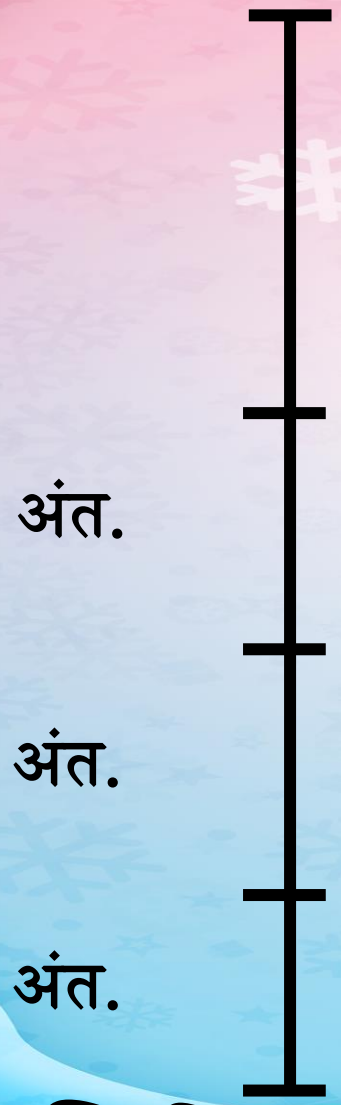


स्थिति बंधापसरण

वास्तविक गणित

अंत:कोटाकोटि /संख्यात

पूर्व बंध-प/सं.

पूर्व बंध-प/सं.

अंत:कोटाकोटि- सागर

www.JainKosh.org

# स्थितिबंधापसरण

उदाहरण- मानाकि प्रथम स्थिति-बंध = 100000 वर्ष; 1 स्थितिबंधापसरण = 5 वर्ष

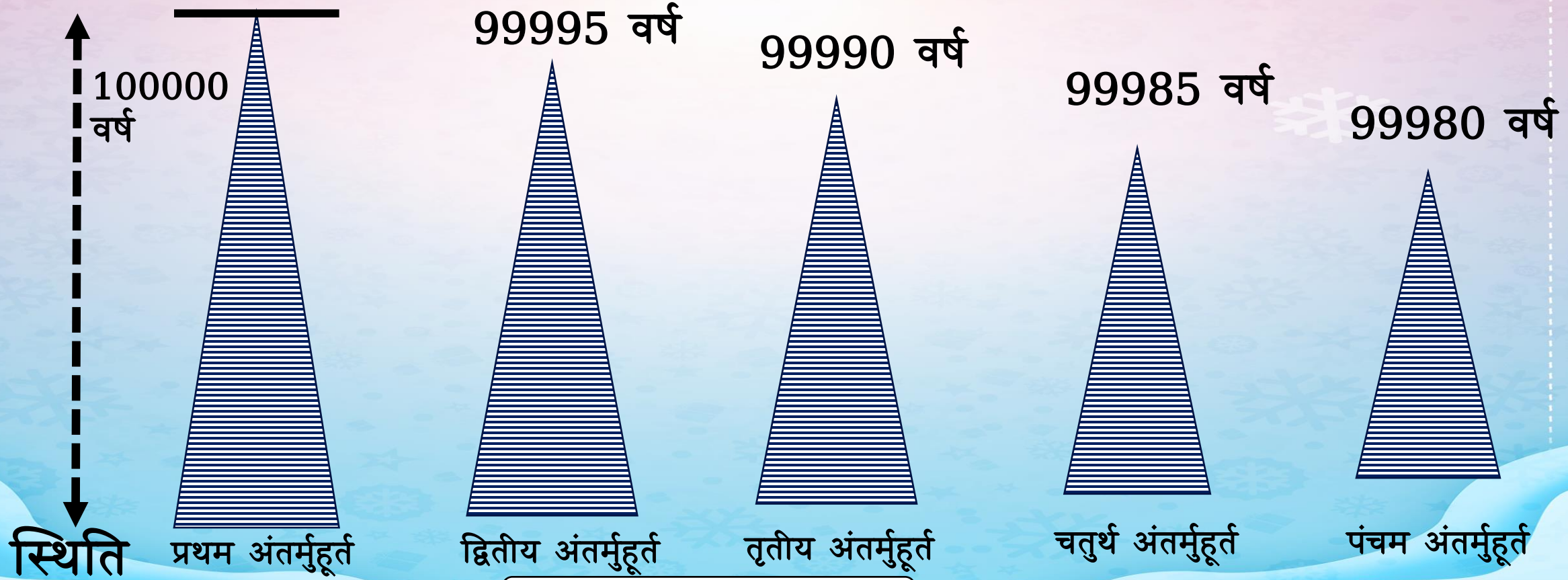


www.JainKosh.org

समस्त कर्मों का स्थिति-बंध क्यों घटता है? सिर्फ पाप प्रकृतियों का क्यों नहीं?

क्योंकि 3 आयु को छोड़कर शेष सभी कर्मों की स्थिति पाप-रूप ही हैं।

org

# अध:प्रवृत्तकरण में कितने स्थितिबंधापसरण ?

1 अंतर्मुहूर्त में 1 स्थितिबंधापसरण होता है,

तो संख्यात × अंतर्मुहूर्त में कितने स्थितिबंधापसरण होंगे?

$\frac{1}{\text{अंतर्मुहूर्त}}$ × संख्यात × अंतर्मुहूर्त = संख्यात

अर्थात् अध:प्रवृत्तकरण काल में संख्यातों(संख्यात हजार) स्थितिबंधापसरण होते हैं ।

www.jainkosh.org

# अंकसंदृष्टि

अंकसंदृष्टि से अध:प्रवृत्तकरण का काल 400 समय माना । एक स्थितिबंधापसरण काल 40 समय माना।

40 समय में एक स्थितिबंधापसरण होता है,

तो 400 समयों में बंधापसरण कितने होंगे?

प्रमाण = 40, फल = 1, इच्छा = 400

$\frac{\text{फल}}{\text{प्रमाण}} \times \text{इच्छा} = \frac{1}{40} \times 400 = 10$

इस प्रकार त्रैराशिक करने पर 10 स्थितिबंधापसरण प्राप्त होते हैं।

# आदिमकरणद्धाए, पढमट्ठिदिबंधदो दु चरिमम्हि ।
# संखेज्जगुणविहीणो, ठिदिबंधो होइ णियमेण ॥40॥

- अन्वयार्थः- (आदिमकरणद्धाए) प्रथम अधःप्रवृत्तकरण काल में (पढमट्ठिदिबंधदो दु) प्रथम स्थितिबन्ध से (चरिमम्हि) अंतिम समय में (संखेज्जगुणविहीणो) संख्यातगुणा कम (ठिदिबंधो) स्थितिबन्ध (णियमेन) नियम से (होइ) होता है ।

www.JainKosh.org

# अध:प्रवृत्तकरण के आदि, अंत में स्थिति बंध

| | | |
|---|---|---|
| आदि में स्थिति बंध | अंत: कोड़ाकोड़ी सागर | अंत में प्रारंभ के स्थिति बंध से संख्यात गुणा हीन स्थिति बंध हो रहा है ।<br><br>४ की संदृष्टि संख्यात के लिए है । |
| अंत में स्थिति बंध | $\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{४}$ | |

ww

# विचारणीय

1 बार में यदि 1 पल्य भी स्थिति बंध में कम होता है, तो 1 सागर कम करने के लिए कितने स्थितिबंधापसरण करने होंगे?

10 कोड़ाकोड़ी क्योंकि 1 सागर में 10 कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं ।

यदि 2 सागर कम करने हैं, तो 20 कोड़ाकोड़ी स्थितिबंधापसरण करने होंगे ।

इस प्रकार यदि 1 करोड़ सागर कम करना है तो 10 करोड़ x करोड़ x करोड़ स्थितिबंधापसरण किये जाते हैं ।

इतने अंतर्मुहूर्त अध:प्रवृत्त करण के एक अंतर्मुहूर्त में शामिल हैं ।

# तच्चरिमे ठिदिबंधो, आदिमसम्मेण देससयलजमं ।
# पडिवज्जमाणगस्स वि, संखेज्जगुणेण हीणकमो ॥41॥

- अन्वयार्थः- (तच्चरिमे) अधःप्रवृत्तकरण के अंतिम समय में प्रथमोपशम सम्यक्त्व के सन्मुख जीव को जो स्थितिबंध होता है उससे (आदिमसम्मेण) प्रथमोपशम सम्यक्त्व-सहित (देससयलजमं पडिवज्जमाणगस्स वि) देशसंयम और सकलसंयम को प्राप्त होने वाले जीव को (संखेज्जगुणेण हीणकमो) क्रमशः संख्यातगुणा हीन (ठिदिबंधो) स्थितिबंध होता है ।

www.JainKosh.org

# अध:प्रवृत्त करण के अंतिम समय में स्थिति बंध

| पद | स्थितिबंध का प्रमाण |
|---|---|
| प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित चतुर्थ गुणस्थान में जाने वाले जीव को अध:प्रवृत्त करण के अंतिम समय में होने वाला स्थिति बंध | $\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{४}$ |
| प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित पंचम गुणस्थान में जाने वाले जीव को अध:प्रवृत्त करण के अंतिम समय में होने वाला स्थिति बंध | $\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{४ \times ४}$ |
| प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित सप्तम गुणस्थान में जाने वाले जीव को अध:प्रवृत्त करण के अंतिम समय में होने वाला स्थिति बंध | $\frac{\text{अंत: कोड़ाकोड़ी सागर}}{४ \times ४ \times ४}$ |

आदिमकरणद्धाए, पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
अहियकमा हु विसेसे, मुहुत्तअंतो हु पडिभागो ॥42॥

- अन्वयार्थः- (आदिमकरणद्धाए) प्रथम करण के काल में (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (अहियकमा हु) अधिक क्रम से (असंखलोगपरिणामा) असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम होते हैं । (विसेसे) विशेष अर्थात् चयप्रमाण को प्राप्त करने के लिए (मुहत्तअंतो हु) अंतर्मुहूर्त (पडिभागों) प्रतिभाग (भागहार) है ।

www.JainKosh.org

# आवश्यक सूत्र

$$\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}} = \text{चय}$$

$$\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ} = \text{चयधन}$$

$$\text{सर्वधन} - \text{चयधन} = \text{आदिधन}$$

$$\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}} = \text{आदि}$$

# सर्वधन = 3072, गच्छ = 16, संख्यात = 3

| | | |
|---|---|---|
| चय | $\frac{\text{सर्वधन}}{\text{गच्छ}^2 \times \text{संख्यात}}$ | $\frac{3072}{16 \times 16 \times 3} = 4$ |
| चयधन | $\frac{\text{गच्छ} - 1}{2} \times \text{चय} \times \text{गच्छ}$ | $\frac{16 - 1}{2} \times 4 \times 16$<br>$= 15 \times 2 \times 16 = 480$ |
| आदिधन | सर्वधन – चयधन | 3072 – 480 =2592 |
| आदि | $\frac{\text{आदिधन}}{\text{गच्छ}}$ | $\frac{2592}{16} = 162$ |

| | |
|---|---|
| 16 | 222 |
| 15 | 218 |
| 14 | 214 |
| 13 | 210 |
| 12 | 206 |
| 11 | 202 |
| 10 | 198 |
| 9 | 194 |
| 8 | 190 |
| 7 | 186 |
| 6 | 182 |
| 5 | 178 |
| 4 | 174 |
| 3 | 170 |
| 2 | 166 |
| 1 | 162 |
| समय | परिणामों की संख्या |

# अध:प्रवृत्त करण के परिणामों की रचना

## (अंक संदृष्टि से)

कुल परिणाम = 3072

समय = 16

चय = 4

प्रथम समय के परिणाम = 162

www.JainKosh.org

| | |
|---|---|
| 16 | 162 + (4 × 15) |
| 15 | 162 + (4 × 14) |
| 14 | 162 + (4 × 13) |
| 13 | 162 + (4 × 12) |
| 12 | 162 + (4 × 11) |
| 11 | 162 + (4 × 10) |
| 10 | 162 + (4 × 9) |
| 9 | 162 + (4 × 8) |
| 8 | 162 + (4 × 7) |
| 7 | 162 + (4 × 6) |
| 6 | 162 + (4 × 5) |
| 5 | 162 + 4 + 4 + 4 + 4 |
| 4 | 162 + 4 + 4 + 4 |
| 3 | 162 + 4 + 4 |
| 2 | 162 + 4 |
| 1 | 162 |
| समय | परिणामों की संख्या |

## चयधन का तात्पर्य

आदि (162) से अधिक जो द्रव्य ऊपर-ऊपर अधिक दिया है, उसका जोड़ चयधन है ।

# अनुकृष्टि रचना

| | |
|---|---|
| अनुकृष्टि गच्छ | $= \frac{\text{ऊर्ध्व गच्छ}}{\text{संख्यात}} = \frac{16}{4} = 4$ |
| अनुकृष्टि चय | $= \frac{\text{ऊर्ध्व चय}}{\text{अनुकृष्टि गच्छ}} = \frac{4}{4} = 1$ |
| सर्वधन = 162, गच्छ = 4, चय = 1 | |
| चयधन | $= \frac{4 - 1}{2} \times 1 \times 4 = 3 \times 1 \times 2 = 6$ |
| आदिधन | $= 162 - 6 = 156$ |
| आदि | $= \frac{156}{4} = 39$ |

- तो प्रथम समय संबंधी रचना ऐसे बनेगी ।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 162 ➔ | 39 | 40 | 41 | 42 |

- ऐसे ही द्वितीय समय संबंधी रचना बनाइये ।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 166 ➔ | 40 | 41 | 42 | 43 |

- ऐसे ही सारे समयों में बनाइये ।

www.JainKosh.org

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 16 | 222 | 54 | 55 | 56 | 57 |
| 15 | 218 | 53 | 54 | 55 | 56 |
| 14 | 214 | 52 | 53 | 54 | 55 |
| 13 | 210 | 51 | 52 | 53 | 54 |
| 12 | 206 | 50 | 51 | 52 | 53 |
| 11 | 202 | 49 | 50 | 51 | 52 |
| 10 | 198 | 48 | 49 | 50 | 51 |
| 9 | 194 | 47 | 48 | 49 | 50 |
| 8 | 190 | 46 | 47 | 48 | 49 |
| 7 | 186 | 45 | 46 | 47 | 48 |
| 6 | 182 | 44 | 45 | 46 | 47 |
| 5 | 178 | 43 | 44 | 45 | 46 |
| 4 | 174 | 42 | 43 | 44 | 45 |
| 3 | 170 | 41 | 42 | 43 | 44 |
| 2 | 166 | 40 | 41 | 42 | 43 |
| 1 | 162 | 39 | 40 | 41 | 42 |
| समय | परिणामों की संख्या | अनुकृष्टि के खंड | | | |

# अधःप्रवृत्त करण के सर्व समयों की अनुकृष्टि रचना

# अनुकृष्टि रचना

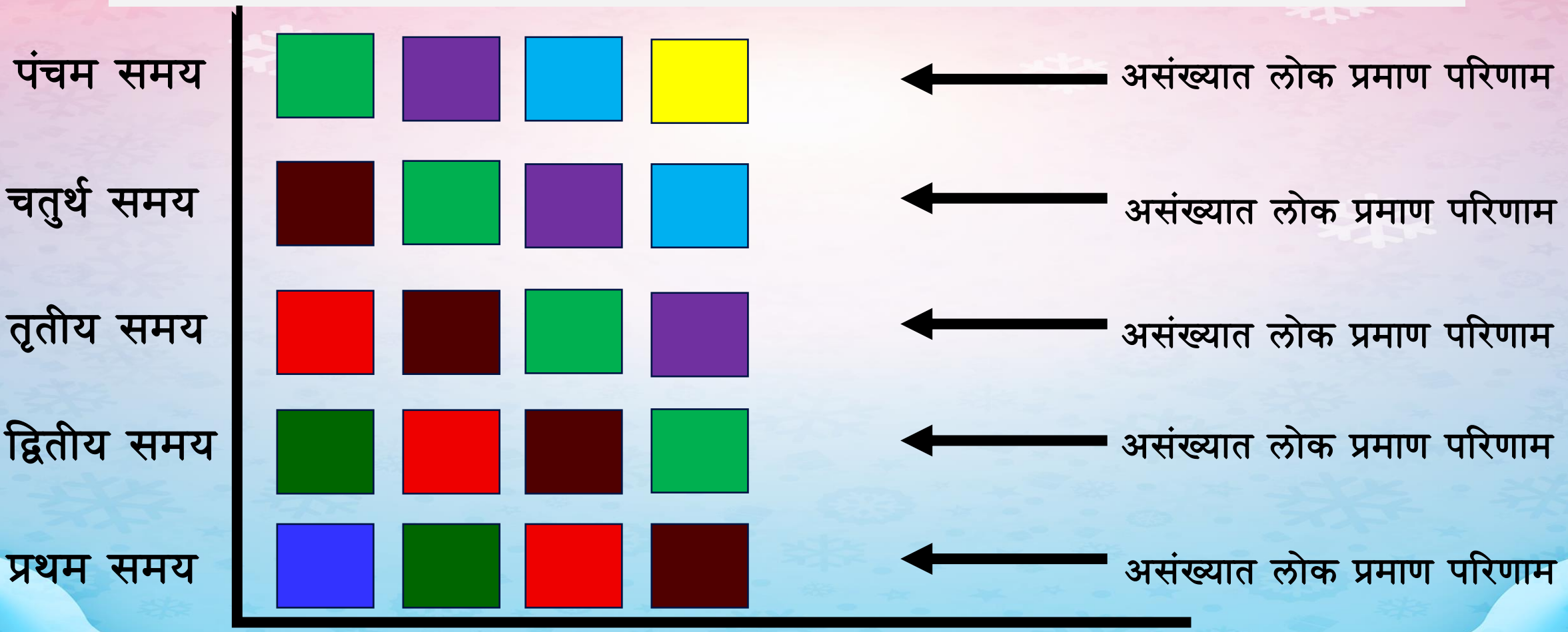


काल - अंतर्मुहूर्त

www.JainKosh.org

# अनुकृष्टि रचना

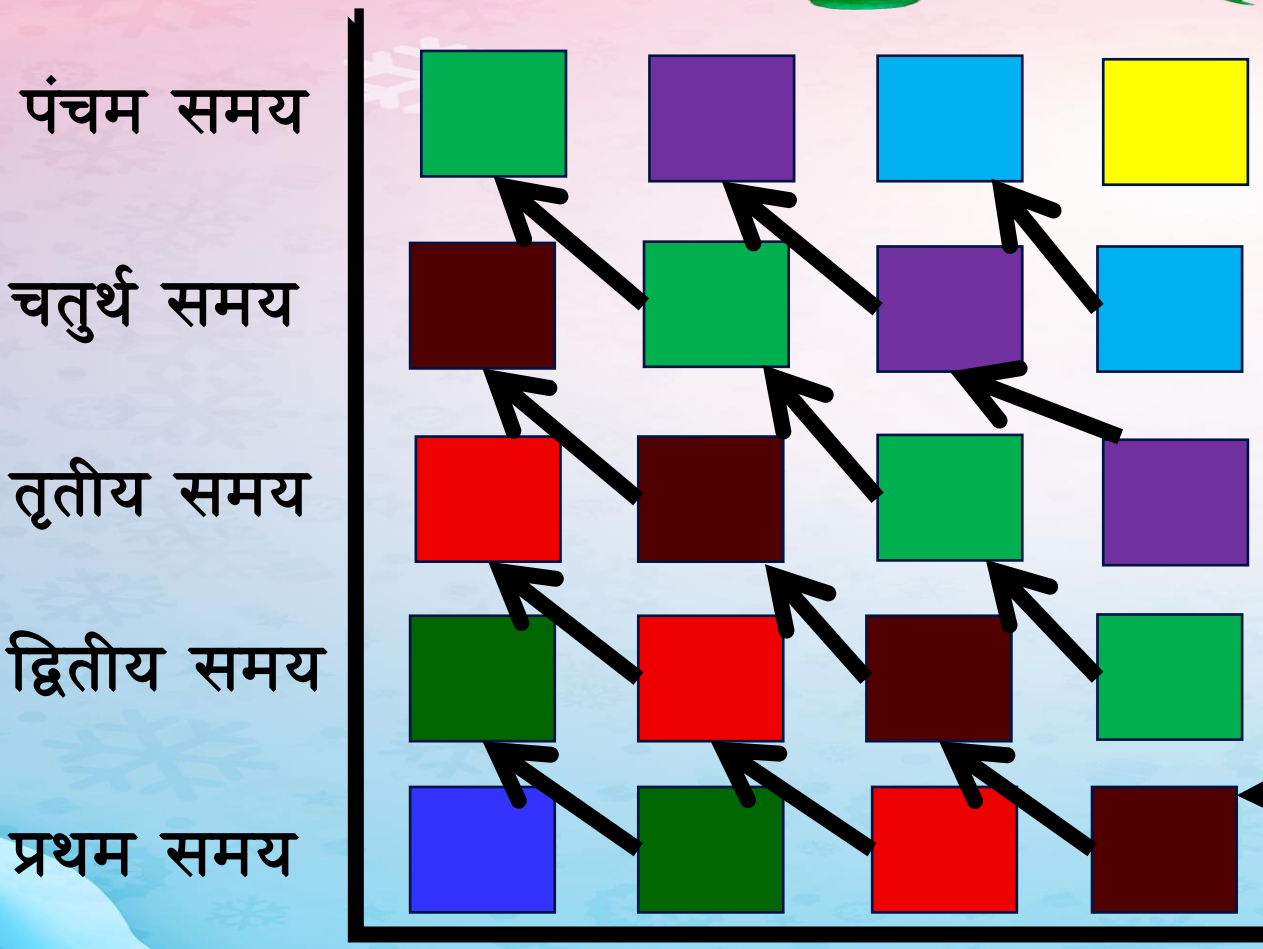


नीचे के समय में स्थित परिणाम-पुंज का ऊपर के समय में पाया जाना

काल - अंतर्मुहूर्त

www.JainKosh.org

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 5 | 178 | 43 | 44 | 45 | 46 |
| | | (163-205) | (206-249) | (250-294) | (295-340) |
| 4 | 174 | 42 | 43 | 44 | 45 |
| | | (121-162) | (163-205) | (206-249) | (250-294) |
| 3 | 170 | 41 | 42 | 43 | 44 |
| | | (80-120) | (121-162) | (163-205) | (206-249) |
| 2 | 166 | 40 | 41 | 42 | 43 |
| | | (40-79) | (80-120) | (121-162) | (163-205) |
| 1 | 162 | 39 | 40 | 41 | 42 |
| | | (1-39) | (40-79) | (80-120) | (121-162) |
| समय | परिणामों की संख्या | अनुकृष्टि के खंड | | | |

# अनुकृष्टि खंडों के परिणाम

सबसे जघन्य खण्ड व उत्कृष्ट खण्ड सर्वथा असमान हैं ।

एक खंड के जघन्य से उसी खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

एक खंड के उत्कृष्ट से अगले खण्ड का जघन्य परिणाम अनंत गुणी विशुद्धता लिए है ।

# वास्तविक संख्याएं

अध:प्रवृत्तकरण का काल अन्तर्मुहूर्त है अर्थात् असंख्यात समय

कुल परिणामों की संख्या असंख्यात लोक प्रमाण है ।

चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है ।

एक-एक समय के परिणामों की संख्या भी असंख्यात लोक है ।

अनुकृष्टि गच्छ अन्तर्मुहूर्त का संख्यातवा भाग होकर भी असंख्यात समय प्रमाण है।

अनुकृष्टि चय का प्रमाण भी असंख्यात लोक है।

एक-एक अनुकृष्टि खंड के परिणाम भी असंख्यात लोक हैं।

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889

- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं प्लेलिस्ट चुनें ।